**International Journal of Hindi Research**
**ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22**
**Received: 26-09-2020; Accepted: 11-10-2020; Published: 27-10-2020**
**www.hindijournal.com**
**Volume 6; Issue 5; 2020; Page No. 163-164**

# काशीनाथ सिंह के कथा साहित्य में सांस्कृतिक विमर्श

**सुधा कुमारी**
सहायक शिक्षिका, +2 परियोजना बालिका उच्च विद्यालय, आनंदपुर, दरभंगा, बिहार, भारत

**सारांश**
साठोत्तर पीढ़ी के साहित्यकार काशीनाथ सिंह हिन्दी साहित्य के समकालीन लेखकों में सर्वाधिक चर्चित और प्रासंगिक प्रतीक होते हैं तो इसका एक मात्र कारण उनका जादुई शिल्प एवं बेलौस–बेबाक भाषा ही नहीं है बल्कि वो प्रखर दृष्टि है जो आधुनिक मानवीय समस्याओं से मुक्ति की राह प्राचीन भारतीय संस्कृति के सहारे तलाशता है। काशीनाथ सिंह की कहानियों, उपन्यासों, संस्मरणों आदि में न सिर्फ सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक तथा आर्थिक समस्याओं का प्रतिबिम्ब नजर आता है वरन् नवीन साहित्यिक प्रयोग भी सहज ही दृष्टिगोचर जो जाता है। इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह कि ये कहीं भी अपने आपको दोहराते नहीं है। इनकी हर रचना अपने आप में अनूठी है और ऐसा प्रतीत होता है हकि इसके लेखक अलग–अलग हैं। काशी का अस्सी' पढ़नेवाला पाठक जब 'उपसंहार' पढ़ता है तो उसे फक्कड़, मस्तमौला और ठेठ देहाती गाली उच्चारित करनेवाला लेखक काशीनाथ सिंह के दार्शनिक व्यक्तित्व भान हो जाता है। हिन्दी साहित्य में काशीनाथ अपनी प्रयोगधर्मिता के लिए जाने जाते हैं और अपने अंदजे बयाँ की गजब भाषा शौली में जितने प्रयोग इन्होंने किया है वैसा अन्य किसी भी लेखक ने नहीं किया है।

**मूल शब्द:** काशीनाथ सिंह, कथा साहित्य, सांस्कृतिक विमर्श

## प्रस्तावना
लेखक काशीनाथ की साहित्यिक यात्रा का आरंभ 'सुख' कहानी से हुआ है' [1] और भूमंडलीकरण के कारण मानवीय जीवन में कैसे 'सुख' की परिभाषा बदली गई है इसका यथार्थपूर्ण चित्रण इस कहानी में हुआ है। इस तरह हम देख सकते हैं कि भारतीय संस्कृति में क्षरण के सर्वाधिक जिम्मेवार प्रवृत्ति बाजारवाद को उन्होंने अपनी पहली रचना में ही उकेरा है और बताया कि किस तरह से समाज में तन्हाई का शिकार बनकर व्यक्ति अवसाद ग्रस्त हो जाता है। तार बाबू के पद से रिटायर भोलाबाबू जब ग्रामीण परिवेश में सूर्य उदय तथा सुर्यास्त की प्रकृति छटा से सुख का अनुभव करते हैं तो उन्हें घर से बाहर तक एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं मिलता है जो उनकी भावना को समझ सके और उनके 'सुख' का साझीदार बने। बस लोला बाबू का सुख ही उनके दुख का कारण बन जाता है। भारतीय समाज पर सांस्कृतिक क्षरण ने जिस तरह का कुठाराघात किया, उसका जीवंत चित्रण काशीनाथ की कथाओं में हुआ है। इन्होंने कथाओं में सांस्कृतिक पक्षों को उभारते हुए समानता एवं समन्वय पर आधारित मानवतावाद का समर्थन किया है। समाज में किसी भी प्रकार की असमानता इन्हें बर्दाश्त नहीं है और वे अपनी कथाओं के माध्यम से काशीनाथ सिंह असमानता रूपी समस्या की तह तक पहुँच जाते हैं। 'कहानी सरायमोहन' में इन्होंने आजाद भारत में भी जारी जातीय असमानता को को दिखाया है और ठाकुर व ब्राह्मण युवक को चमार के हाथ से बनी 'बाटियाँ' खाने के क्रम में जो मानसिक द्वंद उत्पन्न होता है, उसके जरिए इन्होंने यह बताने का प्रयास किया है कि भूख मानव की सबसे बड़ी जरूरत है और जब इसकी आग तीव्र होती है तो सारा बड़प्पन, ऊँच–नीच की भावना विलोपित हो जाती है। भूख ने ही मनुष्य में सामूहिकता की भावना उत्पन्न की है और इसी भावना के वशीभूत होकर यह उन्नत मानवीय संसार भी बना है। काल खंडों के विभिन्न चरणों से गुजर कर हमारे समाने जो आधुनिक, डिजीटल युग उपस्थित है वहाँ तक पहुँचने के क्रम में हम मानवों ने बहुत कुछ खोया है। जिन सांस्कृतिक मूल्यों का निर्धारण हमारे पुरखों ने मानव–हित में किया था, वह पूँजीवादी प्रभाव से ध्वस्त हो रहा हे। लेखक काशीनाथ सिंह ने कथाओं में सांस्कृतिकक्षरण के पक्षों को यथार्थपूर्ण तरीके से अभिव्यक्त किया है।

प्राचीनकाल से लेकर समकालीन दौर तक में भारतीय सांस्कृतिक स्वरूप में हुए जिन बदलावों ने मानवता को प्रभावित किया है उन सब पर काशीनाथ सिंह की विहंगम दृष्टि पड़ी है। उनकी लेखकीय संवेदना व्यक्ति को सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति सजग करती है। वस्तुतः इनका मानवतावाद समानता तथा समन्वय पर आधारित है। इन्होंने सभी को एक समान मानवीय नजर से देखा है और समाज में व्याप्त असमानता के तह तक पहुँचने की कोशिश की है। बाजारवाद के कारण जीवन मूल्य में गिरावट और बदलते मानवीय रिश्ते का यथार्थ इनकी कथाओं में प्रमुखता से प्रगट हुआ है। इनकी कहानी 'मौज–मस्ती के दिन' में सुखराम की नौकरी साहब की विदेशी कुतिया के चक्कर में खतरे में पड़ी हुई है। एक निम्नवर्गीय व्यक्ति सरकारी नौकरी मिलने पर जो मौजमस्ती भरे दिन की कल्पना करता है उस पर साहब की कुतिया ने कुठाराघात कर दिया है। बाजार ने मानवीय सोच को ही बदल दिया और साहब का अपने सेवक से नहीं बल्कि कुतिया के प्रति अपार प्रेम इस को प्रमाणित करता है। व्यवस्था के ऊपर व्यंग्य करती यह कहानी बताती है कि समाज और मानव जीवन से सरलता, एवं विविधता का लोप हो गया है जिसके चलते मस्ती भरे दिन भी असमानता, स्वार्थ और प्रभुता के कारण लोगों के जीवन में बहार नहीं ला पाता है। अर्थ की बढ़ी महत्ता से व्यक्तियों में संवेदनहीनता बढ़ रही है।

भारतीय संस्कृति की जीवंतता तथा मानवताबाद को उकेरते हुए काशीनाथ सिंह ने लिखा है कि ''भारत वह देश है जिसने 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की परिकल्पना तब की थी, जब यह वर्तमान दुनिया अस्तित्व में नहीं थी। गुलामी के दिनामें गुरूदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने महामानव की कल्पना की थी। [2] प्राचीनकाल से भारत के दर्शन ने मनुष्यता को प्रधानता प्रदान की है और इसी कारणवश हम अतिथि को भगवान का दर्जा देते हैं तथा सम्पूर्ण विश्व को अपना मानते हैं। विश्व–बंधुत्व की भावना भारत की विशेषता है। भारत की सांस्कृतिक विशेषताओं तथा यहाँ के समाज से लेखक बखूबी परिचित है। वे जानते हैं कि यहाँ के

आमलोगों की मानसिकता और खास लोगों की दूरगामी विकासप्रद सोच में कितना अंतर है। लोगों का रहन–सहन, खान–पान, बोली–विचार सब कुछ काशीनाथ सिंह को मालूम है। इनकी इस विशेषता का भाव उपन्यास 'काशी का अस्सी' सहजता से करा देता है। भारतीय संस्कृति में बनारस नगर का व्यापक महत्व रहा है। यह प्राचीनतम नगरी धार्मिक स्थल के रूप में विश्व–विख्यात रहने के साथ–साथ ज्ञानभूमि भी रही है। काशी की सांस्कृतिक विरासत के बहाने लेखक ने संपूर्ण भारत की संस्कृति का अहसास करा दिया है। इन्होंने लिखा है – ''शहर में सितम्बर में होने वाले लोलार्ककुण्ड के मेले के बाद से देवी–देवताओं के मंदिरों का श्रृंगार शुष्क होता हे। इसमें मंदिरों की सजावट की जाती है, जिसकी बत्तियाँ और झालरों से फिर बाकायदा पूजा होती है ओर बाद रात साढ़े दस–ग्यारह से आरंभ होता हे कजली दंगल, बिरहा दंगल, कलाली आदि। यह सिलसिला छः माह तक चलता है। आधी रात से लेकर सुबह सात बजे तक। [3] धर्म व्यक्ति को मानवता से जोड़ता है ओर मावतायुक्त मानव महामानव बन जाता है। धर्म ही मनुष्यता निर्माण की पहली सीढ़ी है। मानवतावाद को सर्वोपरि माननेवाले भारतीय संस्कृति के धार्मिक आस्था से ओतप्रोत होने की यही एक प्रमुख वजह रही है। धर्मानुकूल जीवन शैली भारतीयों की दिनचर्या में शामिल रहा है। हमारे मनोरंजन के साधनों में शुमार कजली–विरहा की विरह–वेदनायुक्त सुरीली तान और कव्वाली का सूफियाना अंदाज यह बताता है कि हम भारतीय सादा जीवन और उच्च विचार को प्राथमिकता देते रहे हैं परंतु पूँजीवादी कोख से उत्पन्न बाजारवाद ने हमारी मान्यताओं को छिन्न–भिन्न कर दिया हैं कजली–विरहा, कव्वाली आदि के स्वर बाजारवाद के प्रसार में अहम योगदान देनेवाले बड़े एवं छोटे पर्दे की चकाचौंध में गुम होते जा रहे हैं भारतीय संस्कृति की पहचान रही नाट्य मंडलियाँ, लोक गायकों के समूह, ढ़ोल–आल, मृंदग आदि की गूँज समाप्त हो रही है। हमारी संस्कृति का वजूद किस तरह से मिट रहा है उसे काशीनाथ सिंह ने वनारस की वस्तुस्थितिति को चित्रित कर बताया है – ''अखंड हरिकीर्तनों का शहर!

रात–रात कव्वालियों और विरहा दंगलों का शहर!
कधे पर लंगोट या सिर पर लंगोट की पगड़ी बाँधे हैं शहर!
पान की दूकान के आगे सुबह–शाम गप्पे मारता और ठहाके लगाता शहर!

गलियों और गालियों, घाटों और गालियों, हर हर महादेव के नारों और तालियों का शहर!

प्राणों से प्यारा शहर!
दुनिया में न्यारा शहर!
आंखों का तारा शहर!

हाय! हाय! हमारा शहर ! [4] भारत को गाँवों का देश कहा जाता है और यही वजह है कि हमारे शहरें भी ग्रामीण पृष्ठभूमियुक्त रहे हैं। शहरों को आवाद ग्रामीणों ने ही किया है। पर अब चहुंओर बाजारवाद हावी है। शहर से लेकर देहात तक में मॉल संस्कृति पसर रही है। सर पर लंगोट की पगड़ी पहननेवाले काशी शहर के युवाओं का कुश्ती–दंगल से मोहभंग हो चुका है और वे सर पर टोपी लगाकर नवीन कल्चर का ग्रहण कर चुके हैं। हमारे शहरों का देहातीपन समाप्त हो चुका है, हमारी मानवतावादी आस्था पर बाजारू ग्रहण लग चुका है। नतीजन गालियों–तालियों की गूंज में ठहाके लगानेवाले शहरों का माहौल हत्या, बलात्कार, प्रताड़ना–शोषण की चक्की में पिसकर कराह रहा है। हाय–हाय कर रहा है– शहर। पूँजीवाद का फैलाव निरंतर जारी है और इसे कुचक्र में हमारी संस्कृति का वजूद मिट रहा है।

काशीनाथ सिंह धरातल से जुड़े साहित्यकार हैं और वे जानते हैं कि हमारी प्रगति का मूलाधार समृद्धशाली संस्कृति से जुड़ा हुआ है। संस्कृति के नष्ट होते ही हम भारतीयों का वजूद मिट जाएगा। संस्कृति राष्ट्र गौरव का प्रतीक होती है और इसकी समाप्ति का अर्थ गुलामी का आरंभ है। बाजारू संस्कृति हमें सुविधाओं के मोहपाश में बाँधकर इसी गुलामी की ओर बढ़ा रही है। संस्कृति की व्यापकता के चलते ही काशीनाथ सिंह की अधिकांश कथाओं में इसका विवरण मिलता है। 'बाजारबाद ने मानवों के आचार–विचार, व्यवहार, जीवन–मरण सबकुछ को प्रभावित किया है। लेखक ने अपने प्रथम उपन्यास 'अपना मोर्चा' में भाषिक संस्कृति के स्वरूप पर टिप्पणी की है – ''हमारी और उनकी भाषा अलग है। वे हमें नहीं समझते। कहीं से भी हमसे मेल नहीं खाते। न कपड़ों में न रहन–सहन में न तौर–तरीकों में न खान–पान में। हमारी भाषा हमारे खेत है, हमारी मेहनत गाढ़ी कमाई और उनकी भाषा है – मौज–मस्ती।'' [5] विविधता में एकता हमारी संस्कृति की विशेषता है और इसी मजबूत डोर से जाति–धर्म और वर्गों में बँटा भारतीय समाज बंध है। भारत की अनेकता में एकता का रहस्य इसकी संस्कृति में ही छुपा हुआ है। बाजारू–संस्कृति मुनाफे की संस्कृति है। यह व्यक्ति की सहजता छीनकर उसे भावहीन बनाती है। इसकी भाषा, रहन–सहन, तौर–तरीका सबकुछ भिन्न है। पूँजीवाद एकता को खंडित करती है, वर्ग–विभेद बढ़ाती है। अमीर–गरीब के बीच की खाई को चौड़ी करती है। हमें सुविधाभोगी बनाकर हमारे वजूद पर बाजारवाद कब्जा कर रहा हे। भारतीय संस्कृति की महत्ता उसके मूल्यों में निहित है और इसमें गिरावट हमें पीछे धकेल रही है, हमारी प्रगति को अवरूद्ध कर रही है। लेखक काशीनाथ सिंह ने अपनी कहानियों–उपन्यासों में भारतीय संस्कृति के विविध पहलूओं की परख अपनी विशिष्ट लेखकीए शैली में की है। परंपरा और आधुनिकता के द्वन्द को व्यंग्यपूर्ण, रोचक और सरल लेखन के जरिए काशीनाथ सिंह ने उजागर किया है। इन्होंने अबतक ''मात्र चालीस कहानियाँ'' [6] लिखी है और 'अपना मोर्चा', 'काशी का अस्सी', 'रेहन पर रग्घू, 'महुआ चरित' एंव उपसंहार समेत इनकी कुल पाँच उपन्यास प्रकाशित हुए हैं। काशीनाथ सिंह का कथा–साहित्य भंडार संख्या के लिहाज से भले ही कम प्रतीत होता हो परंतु इनके लेखन की तीखी, मारक–मोहकधार से पाठक–आलोचक एवं चत्मकृत है। इन्होंने 'गागर में सागर' की भाँति अपना कथा–साहित्य भंडारगृह समृद्ध किय है। जिसके कारण इनकी कथाओं में चित्रित सांस्कृतिक पक्ष का दायरा बहुत ही व्यापक है। इन्होंने अपने लेखन में वैसे सभी सांस्कृतिक–पक्षों को सफलता से उजागर किया है जिससे मानवता की स्थापना हो और बाजारवादी कुचक्र से बचकर हमारा समाज वैमनस्यता से दूर रहे। वर्ग–विभेद न पनपे और आर्थिक संतुलन कायम हो। ताकि स्वस्थ, सुखी–सम्पन्न समाज की कल्पना आधार रूप ले सके। वस्तुतः लेखक की आस्था का केन्द्रविन्दु भारतीय सांस्कृतिक चेतना है और इनका कथा साहित्य हमारी प्राचीन मूल्यों पर आधारित संस्कृति से तो रूबरू कराती ही है साथ ही यह हमें बाजारू व्यवस्था से उत्पन्न खतरों के प्रति भी सजग करती है।

## संदर्भ ग्रंथ


1. 'कहनी उपखान' लेखक, काशीनाथ सिंह, प्रकाशक राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0सं0– कवर फ्लॉपी।
2. आलोचना भी रचना है' लेखक– काशीनाथ सिंह, प्रकाशक, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली पं0सं0– 148
3. 'काशी का अस्सी' लेखक– काशीनाथ सिंह, प्रकाशक– राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पं0सं0– 92
4. 'गोपाड़ी से गपशप' लेखक– काशीनाथ सिंह, प्रकाशक– राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पं0सं0–13–14
5. 'कहानी के नए प्रतिमान' लेखक– काशीनाथ सिंह, प्रकाशक– वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पं0सं0– 108
6. 'कहानी उपखान' लेखक– काशीनाथ सिंह, प्रकाशक– राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पं0सं0– कवर पॅलापी।